डबल एक्शन दवा - एक चाबी, दो ताले

डॉ. डी. बालसुब्रमण्यन

चिकित्सा इतिहास में दवा की खोज अनुभव-आधारित रही है। पौधों और यहां तक कि जंतुओं से प्राप्त होने वाले पदार्थों को दवा के रूप में आज़माया गया है और पिछले कुछ सालों में कुछ उपयोगी पदार्थों को चुनकर उनका इस्तेमाल बीमारियों और अन्य चिकित्सकीय परिस्थितियों में किया जाने लगा। ज़्यादातर समय इनमें से कई का उपयोग सामान्य टॉनिक की तरह ही किया जाता है। जैसे पूर्वी क्षेत्र में गिंग्को या कहवा, भारतीय आयुर्वेद में अश्वगंधा या यूनानी चिकित्सा में ज़िंदा तिलिस्मत। लेकिन सिंकोना की छाल जैसी कुछ चीज़ों का उपयोग मलेरिया के लिए, या सदाबहार की पत्तियों को परंपरागत दवा में कैंसर के खिलाफ इस्तेमाल किया जाता है। आधुनिक कार्बनिक रसायन ने इनमें सक्रिय तत्व को क्रमशः कुनैन और विनक्रिस्टीन के रूप में पहचाना है। अलबत्ता, ये सभी प्रयास अनुभवों पर और कर-करके देखने के तरीके पर आधारित रहे हैं और इनके विकास में सालों का वक्त लगा है।

रसायन विज्ञान में प्रगति के साथ, यह मुमकिन हुआ है कि इन मिश्रणों में से एक-एक पदार्थ को अलग-अलग करके प्रयोगशाला में उनका संश्लेषण शुद्ध रूप में किया जा सके। रसायन शास्त्र की इस शाखा को प्राकृतिक उत्पाद रसायन कहा जाता है और यह भारत में 1950 के दशक से शोध का एक उपजाऊ क्षेत्र रहा है।

इसी दौरान, चिकित्सा विज्ञान, खासकर पैथोलॉजी के क्षेत्र में प्रगति से हमें उन अंगों, ऊतकों और कोशिकाओं पर ध्यान केंद्रित करने में मदद मिली जो संक्रमित हैं या जिनके कामकाज में गड़बड़ी है। और जीव विज्ञान में उन्नति से हमें यह समझने में मदद मिली कि आण्विक या कोशिकीय स्तर पर क्या होता है जिससे गड़बड़ियां होती हैं। इस प्रकार कोशिकीय और आण्विक दवा के युग का आगाज़ हुआ।

उदाहरण के लिए, मधुमेह का कारण शरीर में रक्त शर्करा का स्तर असामान्य तौर पर अधिक होना है। जबकि शर्करा हमारे शरीर की कोशिकाओं और ऊतकों की वृद्धि और रखरखाव के लिए बेहद ज़रूरी है लेकिन इसकी अधिकता कुछ प्रोटीन अणुओं की रासायनिक संरचना को बदलकर हमारी शरीर क्रियाओं को ठप कर देती है। इसका एक उदाहरण शर्करा और ऑक्सीजन-ट्रांसपोर्ट करने वाले प्रोटीन (हीमोग्लोबीन) की रासायनिक क्रिया में नज़र आता है। इस क्रिया की वजह से हीमोग्लोबिन की संरचना बदल जाती है और ऑक्सीजन को कोशिका तक पहुंचाने की क्रियाविधि प्रभावित होती है। जब इस अवरोधक क्रिया की समझ बनी तब शोधकर्ताओं ने इसके लिए एक दवा (जैसे मेटफॉर्मिन) बनाई जो लीवर में शर्करा के निर्माण की स्वीकार्य सीमा रखती है।

ध्यान रखें, शोधकर्ता जो दवा बनाते हैं उसे मात्र किसी खास अणु/कोशिका पर फिट होना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे हाथ पर दस्ताने या ताले में चाबी फिट होती है। ऐसा होने पर यह अवरोध कोशिका क्रियाविधि के किसी अन्य पहलू को किसी भी रूप में प्रभावित न करके अपना काम करता है। तब इसका कोई साइड इफेक्ट भी नहीं होता है।

साइड इफेक्ट हमेशा मात्र नुकसानदायक हों, यह ज़रूरी नहीं है। कभी-कभी साइड इफेक्ट शरीर के किसी अन्य भाग में फायदा भी पहुंचा सकता है, मात्र संयोगवश। एस्पिरिन एक डबल-एक्शन दवा है। इसे पहले एक दर्द-निवारक के तौर पर प्रस्तुत किया गया था लेकिन बाद में पता चला कि यह रक्त का थक्का हटाने में भी कारगर है। इसकी दर्द-निवारक क्रिया तंत्रिका तंत्र पर होती है जबकि थक्का घोलने की क्रिया रक्त में प्लेटलेट पर होती है। अर्थात एस्पिरिन एक मास्टर चाबी है जो एक से ज़्यादा ताले खोल सकती है। ऐसे कई उदाहरण हैं।

ईएलक्यू 300 नामक अणु एक मलेरिया-रोधी है जो मलेरिया परजीवी के खिलाफ दोनों अवस्थाओं में कार्य करता है - जब वह लीवर में हो और साथ ही साथ जब वह

रक्त प्रवाह में पहुंच चुका हो। अर्थात यह भी एक डबल-एक्शन दवा है। इसी तरह डॉ. आनंद रंगनाथन द्वारा बनाया गया पेप्टाइड एम-5 टीबी और मलेरिया दोनों के लिए प्रभावी साबित हो सकता है।

हाल ही में डबल-एक्शन दवा का एक उदाहरण टेक्सास विश्वविद्यालय हेल्थ साइंस सेंटर से आया है। डॉ. शेपिरो और उनके समूह ने पाया कि मिर्गी के दौरों में उपयोगी रेटिगेबीन नामक दवा चूहों में गंभीर स्ट्रोक को भी कम करती है। इस समूह ने देखा कि जो चूहे स्ट्रोक से प्रभावित थे जब उनका इलाज इस मिर्गी-रोधी दवा से किया गया तो उन्हें हिलने-डुलने, संतुलन और तालमेल में कोई परेशानी नहीं थी।

इस समूह ने रेटिगेबीन को आज़माने का विचार ही क्यों किया? डॉ. शेपिरो का कहना है, 'हमने सोचा कि यदि हम तंत्रिकाओं द्वारा संदेश प्रसारण की क्रिया यानी फायरिंग को रोक दें, तो हम रक्त की आपूर्ति बहाल होने तक उनके संसाधनों की बचत कर सकते हैं। और हुआ भी ठीक ऐसा ही।' उनके सहयोगी डॉ. बियरबॉवर का कहना है, 'यह दवा घटनाक्रम में पहले कदम का तो उपचार करती है और बाद में होने वाले ज़्यादा घातक प्रभावों की रोकथाम करती है। रेटिगेबीन जैसे अणु तंत्रिका कोशिका को सीधे प्रभावित करते हैं।'

एक ओर तो प्रोटीन और कोशिका की सतह पर स्थित अन्य बायो-पोलीमर्स ('तालों') के आकार और बनावट और उनके कंप्यूटर मॉडलिंग की हमारी समझ बढ़ी है तथा दूसरी ओर हम इलेक्ट्रोफिज़ियोलॉजिकल चरणों को भी बेहतर समझ पाए हैं। परिणाम यह हुआ है कि कंप्यूटर पर कोशिकीय उपांगों व क्रियाओं का प्रस्तुतीकरण व मॉडलिंग संभव व बेहतर हुआ है। इससे हमें उन दवा अणुओं (चाबी) की खोज करने में मदद मिली है जो कोशिका सतह पर उपस्थित तालों में लेगो टुकड़ों के समान फिट बैठ सकें। (लेगो एक खेल है जिसमें टुकड़ों को जोड़कर आकृति तैयार की जाती है)। एक से ज़्यादा तालों की खोज की संभावना भी बढ़ रही है और इसके साथ ही दोहरी (या तिहरी) क्रिया वाली दवाओं की संभावना भी बढ़ी है। औषधि विशेषज्ञ अब कंप्यूटर-आधारित दवा डिज़ाइनर बन गए हैं।

आज़मा-आज़माकर दवा खोज की विधि अब आधुनिक हो गई है जिसमें हज़ारों अणुओं का तेज़ी से परीक्षण किया जा सकता है। जिस काम में पहले सालों लगते थे, अब चंद दिनों में ही संपन्न हो जाएगा। लेकिन सिद्धांत वही रहेगा। फ्रेंच में एक कहावत है चीज़ें जितनी बदलती हैं, उतनी ही वही बनी रहती हैं। ***(स्रोत फीचर्स)***

अगले अंक में....

स्रोत जून 2015
अंक 317

- **क्या टेक्नॉलॉजी से भय उचित साबित होगा?**
- **मछलियां: पानी का शक्तिशाली राजघराना**
- **एक सेल्फी से कैंसर का निदान**
- **समय आ गया है मायूसी की धुंध मिटाने का**
- **फिसलन पर देश की सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवा**